ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-2* Issue-7* August- 2017
Innovation The Research Concept

भारतीय संस्कृति और कलाकृतिओं का रूपांकन

नीलम
असिस्टेंट प्रोफेसर व विभागाध्यक्ष,
चित्रकला विभाग,
श्रीमती बी0 डी0 जैन गर्ल्स
पी0जी0 कॉलेज, आगरा

सारांश

भारत में कला को सांस्कृतिक प्रगति, सामाजिक प्रगति और मानवीय जीवन की समृद्धि तथा सामाजिक संगठन का एक शक्ति शाली आधार माना जाता है, इसलिए कला में सत्य, सुन्दर के साथ नैतिकता दर्शाने को अधिक महत्व प्रदान किया जाता है। प्राचीन काल से ही भारतीय संस्कृति धार्मिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों से पूर्णतः आबद्ध एवं अनुस्यूत रही है अतः प्राचीन काल से ही भारतीय कलाकारों ने मात्र बाह्य स्थूल सौन्दर्य से बशीभूत होकर कला की अभिव्यक्ति नही की बलकि अपनी अन्तः प्रेरणाओं एवं अपनी अन्तः चेतना धार्मिक एवं आध्यात्मिक विश्वासों एवं चिन्तन की अभिव्यक्ति देकर कला के मूर्तरूप दिया है। भारतीय संस्कृति को चित्रों के द्वारा दर्शाने का कार्य भारतीय चित्रकारों ने हर रूप के अंकन का कार्य भली भाँति किया हैं।

भारतीय चित्रकला की जितनी विधाएँ है, जैसे आलेखन, दृश्यचित्रण, पदार्थ चित्रण, सन्दर्भ–चित्रण तथा व्यक्ति चित्रण आदि रूपों में चित्रकला जानी जाती है इनमें शीषस्थ स्थान पर व्यक्ति चित्रण को माना जाता रहा है, जो चित्रण को कुशलता का अन्तिम ध्येय है। चित्रसूत्रम् में 'सत्यचित्र' जिसका प्रयोग व्यक्ति चित्र के लिए किया गया है, उसमें साद्धश्य को प्रधान लक्षण माना है। मोहन जोदडो–हडप्पा की खुदाई मे भी नर्तकी की कांस्य प्रतिमा नृत्यमुद्रा में मिली है। कुषाणकाल में ''विमतक्षम'' नामक शासक की प्रतिभा प्राप्त हुई जो मथुरा संग्रहालय में है। अजन्ता की गुफाओं में भी व्यक्ति चित्रण की परम्परा परिलक्षित होती है गुफा संख्या प्रथम में चालुक्य वंशीय पुलकेशियन द्वितीय व ससानी शासक खुसरो का मैत्री भाव का चित्रण तथा बुद्ध की प्रतिभा का चित्रण मिलता है।

तंजौर के बृहदीश्वर मन्दिर के प्रांगण में राजा को अपनी पत्नियों सहित चित्रित दिखाया है। अतः कहा जा सकता है, कि एक चित्रकार हर युग की संस्कृति अपनी बनायी प्रतिभा से इतिहास रचने में उसका महत्वपूर्ण योगदान रहा है, जिसके द्वारा हम अपनी हर युग की परम्परा व संस्कृति से भली भॉति परिचित होने में सहायक सिद्ध होती है।

मुख्य शब्द : भारतीय संस्कृति, सभ्यता, सिन्धु सभ्यता, तंजौर, मोहन जोदड़ो, मानवाकृति अंकन, कुषाण वंश, अजन्ता कला

प्रस्तावना

यह सर्वदा सत्य है, कि किसी भी इतिहास संस्कृति एवं किसी भी समाज को प्रस्तुत करने में कला की महती भूमिका सिद्ध साबित होती रही है, इस धरा पर जब मनुष्य ने अपने आपको पहचॉंनने की कोशिश की तो उसका परिचय प्रकृति की महान जटित शक्तिओं से हुआ और इन शक्तियों के समक्ष उसने अपने आप को प्रस्तुत करने के लिए हाथ से बनाई हुई लकीरों का सहारा लेकर कलाकृति का निर्माण किया जो आज के युग की परम्परा व संस्कृतिक घरोहर से जानी जाने लगी। ये रेखाचित्र गुफाओं की भित्तिओं पर एक लिपि का भी कार्य करते थे। साथ ही पशु–पक्षीयों का अंकन भी काफी रूचिपूर्वक किया। धीरे–धीरे ये प्रक्रिया आगे मानवाकृति के अंकन में परिवर्तित होते–होते भारतीय संस्कृति संभ्यता व परम्परा का रूप बनकर सबके सम्मुख प्रदर्शित हुई। इसी का वर्णन इस शोद्य–पत्र में देने का प्रयास किया गया हैं।

शोध–पत्र का उद्देश्य

भारतीय संस्कृति, सभ्यता तथा परम्परागत विरासत में समय समय पर हुये दृश्यात्मक अंकन का शब्दों द्वारा विवरण देने का प्रयास किया है, जिससे भारतीय संस्कृति की कलात्यकता से सबको अवगत कराया जा सके।

शोध विषय क्षेत्र

कलाकार अन्य मानव प्राणियों के समान समाज में अपना जीवन यापन करने वाला सामाजिक प्राणी है और वह भी सभी प्राणियों के समान प्रकृति प्रद्रत्त

वातावरण में रहता है और अपनी संस्कृति व धर्म का निर्वहन करता है। कला का कार्य क्षेत्र बड़ा व्यापक है। प्राचीन काल से अनेको शताब्दियों तक धर्म तथा संस्कृति का समाज में अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान रहा है और मानव जीवन में सभी कार्य एवं सस्कार धर्मानुसार उसकी संस्कृति से अनुप्राणित और अनुशसित रहे है। धर्म को मानव जीवन में प्रतिष्ठित करने के लिए आदिकाल से ही कलाओं का सहारा लिया गया क्योंकि कलायें सदैव धर्म की संगिनी, सहायक और प्रतिपादक बनी रही। कला मानव मन को दर्शाती है। व्यक्ति जिस देश, समाज व वातावरण में रहता है उसकी छवि मानव मन पर अंकित हो जाती है, जिसको व्यक्ति एक कलाकार के रूप में अपनी कलाकृतियों के माध्यम से समाज के वातावरण में प्रस्तुत करता है जिससे कलाकार अपने उस समय की सभ्यता तथा संस्कृति का परिचय सबके समुख प्रस्तुत कर सके। किसी भी देश की संस्कृति, उस देश की आध्यात्मिक, वैज्ञानिक तथा कलात्मक उपलब्धियों की प्रतीक होती है और उस देश के जनसामुदायिक या सामाजिक जीवन के सर्वश्रेष्ठ जीवन मूल्यों को दर्शाती है। किसी भी देश की संस्कृति का विकास का ज्ञान हमें उस देश के जनजीवन के रीति–रिवाजों, व उनके दैनिक क्रिया कलापों से होता है क्योंकि किसी भी संस्कृति का विकास कम वक्त में नही होता है बल्कि सदियों तक का परिश्रम उस में स्थापित होता है। पुराने देशों, जातियों और समाजों की संस्कृति भी प्राचीन होती है जिस राष्ट्र या समाज को शदाब्दियों तक सुख शान्ति के साथ जीवन को सुधारने का अवसर मिलता है अनकी संस्कृति भी समृद्ध उज्जवल और विकसित होती है। समाज जिसको सत्य तथा सुन्दर मानता है समाज के लोग उसी कार्य को करने में अपनी महानता व संस्कार समझने लगता है। समाज में अनैतिक अभद्र असत्य एवं अशोभनीय कार्य करना निन्दनीय माना जाता रहा है। इन अवगुणों के कारण सामाजिक व्यवस्था का संगठन भंग तो होना ही है साथ में अशान्ति भी फैलती है। यदि समाज में खुद शान्ति नहीं होगी तो सामाजिक प्रगति भी सम्भव नहीं। जिस कारण समाज की अपनी सांस्कृतिक परम्पराओं और सभ्यता तथा शान्तिपूर्ण सामाजिक जीवन को ठेस पहुँचती है। अतः मानव इन बुरे कार्यों को पसन्द नही करता जो उसकी मान्यताओं के अनुकूल नहीं होते है। कलाकार एक सामाजिक प्राणी है इसीलिए उससे यह आशा उम्मीद की जाती है जिसे सामाजिक व्यवस्था व संस्कृति का उत्थान सस्कार वश पूर्ण कृतियों की रचना करें।

कला को सांस्कृतिक प्रगति, सामाजिक प्रगति और मानवीय जीवन की समृद्धि तथा सामाजिक संगठन का एक शक्तिशांली आधार माना जाता है इसलिए कला में सत्य, सुन्दर के साथ नैतिकता दर्शाने को अधिक महत्व प्रदान किया जाता है। परन्तु जिन देशों में शताब्दियों का सुख चैन न रहा हो और उन देशों के मनुष्यों का जीवन स्तर विकसित करने का अवसर न मिला हो तो उनकी संस्कृति का कोई उत्थान नहीं होता है और वह उनके जीवन का केवल एक पक्ष मात्र ही होता है जिसे सभ्यता कहा जाता है। सभ्यता तथा संस्कृति में अन्तर है। सभ्यता किसी भी नवीन या प्राचीन जाति राष्ट्र या समाज की हो सकती है वह समयकालीन जीवन का एक काल विशेष में व्यावहारिक रूप मात्र होती है और शीध्र परिवर्तन ग्रहण करती है परन्तु संस्कृति शीध्र परिवर्तन ग्रहण नहीं करती है और न ही वन सॅबर सकती है। संस्कृति को सुनिशचित तौर पर ग्रहण करने में बहुत वक्त लगता है। संस्कृति परिस्थितियों के अनुसार बदलती है हमें किसी राष्ट्र जाति या समाज के सर्वश्रेष्ठ सामाजिक जीवन मूल्यों की जानकारी उसके द्वारा सम्पादित कार्यों से प्राप्त होती है। मानव अपने जीवन को सुखमय बनाने के लिए बहुत कठिन परिश्रम करता है और कार्य को आनन्दमय व निपुर्णता के साथ सम्पन्न करता है जिससे उसे व सामने वालो को वही आनन्द व खुशी का आभास हो जो उसको हो रहा है वही कला है। इन्ही कालाओं के सहारे संस्कृति को दर्शाने का अवसर प्राणी मात्र को प्राप्त होता है हजारो वर्षो के पश्चात भी संस्कृति का स्वरूप इन कलाओं के माध्यम से ढलता है। क्योंकि कला और संस्कृति का गहरा सम्बन्ध है कला संस्कृति को दार्ष्टिक रूप प्रदान करती है और संस्कृति कला को प्रगति प्रदान करती है और जीवन को अभिव्यक्त करने का आधार बनाती है।

मानव ने हर काल में अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप अपने विकास के प्रयत्नों से अपने कार्य–कलापों में निपुणता एवं कुशलता अग्रसरता तथा विस्तीर्णता की चरम सीमाओं को प्राप्त करने की चेष्टायें की है, जिससे उसकी सभ्यता का निरन्तर विकास हुआ है। यही संस्कृति को आगे बढाती है। हमारा रहन–सहन, मानसिक विकास तथा जीवन चर्या हमारी सभ्यता के परिचायक है। सभ्यता से विकसित नवीन साधनों, यंत्रों तथा प्राविधयों का प्रयोग करना हर प्रगतिशील कलाकार का उद्देश्य है इस तरह कलाकार की कला कृतियाँ संस्कृति के परम्परागत रूप को दर्शाती हुई, परिवर्तन करती हुई चलती रहती है। कलाकार की इन नवीन प्रविधियों, क्रियात्मक प्रणालियों तथा सृजनाओं का समाज में धीरे–धीरें प्रचलन होता जाता है। एक व्यक्ति दूसरे की कला व कलाकृति देखकर कलाकार की रचना–विविधों, और रचित रूपों को ग्रहण करता जाता है, इसी प्रक्रिया को परम्परा कहते है। जिसका उस देश की संस्कुति तथा सभ्यता में महत्वपूर्ण योगदान होता है। भारतीय संस्कृति को चित्रों के माध्यम से दर्शाने का कार्य भारतीय चित्रकारों ने हर रूप के अंकन का कार्य भली भाँति किया है।

भारतीय चित्रकला की जितनी विधाएँ है जैसे आलेखन, हश्यचित्रण, पदार्थ चित्रण सन्दर्भ चित्रण तथा व्यक्ति आदि रूपो में चित्रकला जानी जाती है इनमें शीर्षस्थ स्थान पर व्यक्ति चित्रण को माना जाता रहा है जो चित्रण की कुशलता का अन्तम ध्येय है। संस्कृति साहित्य जहाँ चित्रकला की सभी विधाओं का विशेष वर्णन उपलब्ध है, वहीं व्यक्ति चित्रण पर भी विशेष प्रकाश डाला गया है और संस्कृति साहित्य में इनको अनेकों नांमो से सम्बोधित भी किया गया है। हर्ष देव ने नागानन्द नाटक में इसे सादृश्य चित्र की संज्ञा दी है व धनपाल द्वारा रचित ''तिलकमंजरी'' में व्यक्ति चित्रण हेतु 'प्रतिबिम्वचित्र' का उल्लेख किया है, सोमेश्वर के मानसोल्लास में ''बिद्धचित्र'' का प्रयोग हुआ है वही विष्णुधर्मोत्तर प्रराण के चित्रसूत्रम् नामक प्रकरण में इसे 'सत्यचित्र' तथा बाणभृट

रचित कादम्बरी में इसको ''सच्चति चित्र'', आंग्ल में 'पोर्टेट' तथा फारसी में इसे 'शबीह' अंकन नाम से सम्बोद्धित किया गया।

भारतीय चित्र सम्बन्धी ग्रन्थों मे चित्रित व्यक्ति की बाह्य आकृति और उसकी आन्तरिक प्रकृति जो बाह्य आखों से सामान्य व्यक्तियों को दिखाई नहीं देती, चित्रकार द्वारा अपनी प्रज्ञा शक्ति से ही देखी जाती है। यही बाह्य व आन्तरिक आकृति का सांमजस्य पूर्ण व्यक्ति चित्र है। छान्दोग्य उपनिषद में दर्पण में पडें प्रतिबिम्ब और वास्तविक आत्मिक भाव के अन्तर को सूक्ष्मता से वर्णन कर व्यक्ति चित्रकारों का मार्गदर्शन किया गया है।[1] मैवेय ने 'उत्ततन्त्र' में सफल व्यक्ति चित्र को रहस्यमय देह को साहश्य माना है[2] संस्कृति साहित्य में व्यक्ति चित्रण की मूलभूत विशेषता सादृश्य पर विशेष प्रकाश डाला गया है। चित्रसूत्रम् में सत्यचित्र में जिसका प्रयोग व्यक्ति चित्र के लिए किया गया है उसमें सादृश्य को प्रधान लक्षण माना है। चित्रसूत्रम् का आशय यहाँ सादृश्य से व्यक्ति का साक्षात् प्रतिबिम्ब उतारना न होकर चित्रकार द्वारा चित्रित व्यक्ति के मनोभावों का समावेश आवश्यक माना है। व्यक्ति केवल यन्त्राकृति सादृश्य नही है वह मन द्वारा आकृत होता है एक चित्रकार व्यक्ति के रूप के अपने ध्यान मे लाता है तथा उसके मनोगत भावों को हद्वयगत करता है और फिर अपने चित्रांकन में तूलिका व रंगों को माध्यम से उस आकृति को केनवास पर उकेरता है, तभी वह व्यक्तिचित्र एक उत्कृष्ट कृति के रूप में प्रदर्शित हो पाता है। रूप का सादृश्य जब भाव के दर्पण में प्रतिबिम्बित होता है, तभी वह प्राणवान वन भी पाता है। प्रकट का दर्शन और अप्रकट का प्रजनन दोनों ही चित्राकृति को उत्कृष्टता प्रदान करते है। स्थूल चित्रकारिता केवल यथा तथ्य निरूपरण है हद्वयगत मनोभावों का चित्रण चित्रकार की स्वंतन्त्र प्रजनन शक्ति का परिचायक है। यथा तथ्य का अंकन चित्रकार की अकुशल साधना का फल है और मानव के स्थायी मनोंभावों को जिन्हे चरित्र अंकन कहाँ जाता है मुखाकृति पर सफलता पूर्वक अंकित करना ही उसकी कुशलता का परिचायक है। शुक्रनीति के आचार्य चित्र रचना के पूर्व समाधिस्थ होकर प्रतिभान के सम्मुख प्रतिष्ठित कर उसका सादृश्यपूर्ण चित्रण करने की आज्ञा प्रदान करते है जैसा कालिदास ने अपने 'मालविकाग्रिमित्र' में वर्णन किया है।

सिन्धुसभ्यता की कला के उदाहरण हमे यहाँ प्राप्त मोहरों बर्तनों, मूर्तियों, खिलौने आदि के रूप में देखे जाते थे। दैनिक व्यवहार में प्रयुक्त होने बाले बर्तनों, मोहरों इत्यादि पर की गई अलंकृत चित्रकारी को देखकर यह सहज अनुमान लगाया जा सकता था कि उस समय चित्रकला कितनी उन्नत थी और उसका कितना व्यापक प्रसार था। इन कला अवशेषों को देखकर पता चलता है, कि मानव ह्रदय की चेष्टाओं और प्रवृष्टियों का प्रकटीकरण कला के माध्यम से ही सम्भव है। इस सभ्यता के लोगो की धर्म में आस्था थी इस कारण इनकी मूर्तियाँ धर्ममय है। ये मूतियॉ लकड़ी पाषाण तथा उनके धातुओं से बनी हुई है। सिन्धु उपत्यका से कुल 11 मूर्तियाँ प्राप्त हुई है। सिन्धु सभ्यता से स्त्री आकृतियाँ अधिक बनाई गई है ये मूर्तिया ढालकर या तराश कर बनाई गई हैं। उस समय स्त्री को बहु अधिक महत्व दिया जाता थ। यद्यपि इनकी संख्या कम है, लेकिन जितनी भी मूर्तियॉ प्राप्त हुई है, उनमें ये तत्कालीन कलाकरों की दक्षता और सौन्दर्याबोध पर पर्याप्त प्रकाश डालती है। पत्थरों की मूर्तियों में सबसे महत्वपूर्ण मोहन जोदड़ो से प्राप्त योगी या पुरोहित की मूर्ति है। सफेद चूना पत्थर से निर्मित इन मूर्तियों में आरम्भिक मनुष्य की सभ्य वेशभूषा प्रदर्शित की गई है। यह एक पुरूष की आवृक्ष सहित प्रतिभा है, इसकी मुखाकृति मे मूँछे तथा दाढ़ी को अच्छे से सवारकर अंकित किया गया है। इसके अतिरिक्त दो धड़ भी मिले है, जिनमें एक धड़ सीधे खड़े पुरूष का व दूसरा धड़ एक नर्तकी का है। पुरूष धड़ में पेट कुछ बाहर निकला है, किन्तु संम्पूर्ण शरीर बड़ी कुशलता से उकेरा गया है। नर्तकी के धड़ के हाथ–पैर छिन्न हो गये है, किन्तु इसकी भाव भंगिमा से सहज ही अनुमान होता है, कि इस सभ्यता के नागरिक कला एवं शिल्प में निपुण थे। सिन्धु उपत्यका से 1200 से अधिक सिलखड़ी पत्थर की मोंहरे मिली है, इन सिलखडी मोहरो पर मानव पशु–पक्षी, वृषभ इत्यादि आकृतियाँ बनी है, साथ ही हड़प्पा लिपि में कुछ लिखा भी है, जिसे आज तक पढा नहीं जा सका है। ये हाथी दाँत, पकाई मिट्टी तथा नीले या सफेद एक विशेष प्रकार के चमकीले पत्थर की लिपि है। सर्वाधिक अंकित पशुओं में युनिक कोण, अश्व, चील, हाथी कुकुद वाला वृषभ, भैंसा, गैड़ा तथा पर्वतीय बकरा है। इन मोहरों पर कही–कही मानव आकृतियाँ अंकित है। जिसमें से एक आकृति पशुओं से घिरे एक योगी की है, जिसके सिर पर सींग होने के नाते उसे पशुपति भी कहाँ जाता है। दूसरी मुहर पर दो बाघों के बीच मनुष्य की आकृति है, तथा अन्य मोहरों पर नौकाओं, स्वास्तिक प्रतीक तथा अन्य आकृतियों का अंकन प्राप्त हुआ है।

चित्रकला से संम्बन्धित सर्वाधिक सामग्री पात्रों पर चित्रित आकृतिओं मे उपलब्ध होती है, सिन्धु धाटी सभ्यता में – मिट्टी के छोटे–छोटे व बड़े अनेक प्रकार के बर्तन तथा सहस्त्रों टुकड़े प्राप्त हुये है। जिनमें अनाज रखने के लिए बड़े आकार के बर्तन (कुटीला) पानी रखने के लिए बड़े मठके, सुराही, लोटा मर्तमान, कुल्लड़, कटोरी, तश्तरी, थालियॉ तथा नांदे प्रमुख है। इन बर्तनों के ढक्कन भी बनाये जाते थे। ये बर्तन ज्यातर चॉक पर निर्मित होते थे फिर उन्हे पकाया जाता था पत्पश्चात विभिन्न प्रकार के रंग से रंगकर इस्तेमाल किया जाता था। सिन्धु घाटी सभ्यता के अवशेषों को देखकर ज्ञात होता है, कि मोहन जोदड़ो हड़प्पा एवं लोथल आदि नगरों के निवास कलात्मक प्रतिभा से सुसम्पन्न थे। चित्रकला से संम्बन्धित सर्वोधिक सामग्री पकाये हुये मिट्टी के बर्तनों और उनके टुकड़ो पर चित्रित आकृतियों एवं आलेखनों के रूप में विभिन्न क्षेत्रों से प्राप्त होती है। अंधिकाश पात्रों पर लाल रंग चटख काले रंग से चित्रकारी की गई है। सिंधु धाटी के इन बर्तनों पर कई प्रकार के पेड़–पौधे, पशु–पक्षी एवं ज्यामितीय आकृतियाँ का चित्रण प्राप्त होता है। पेड़–पोधों में पीपल, नीम, ताड़, खजूर, केला एवं बाजरा आदि के पेड़ो को प्रमुखता से चित्रित किया गया है। पशु–पक्षीयों में हिरन, गाय, बछड़ा, बैल, मौर, मुर्गी, कछुआ आदि प्रमुख है। कई स्थानों से प्राप्त मृदभाड़ के टुकडो

पर मानव आकृतियों का अंकन भी मिलता है। उत्खनित साम्रगी से ऐसा कोई भी उदाहरण प्राप्त नहीं हुआ है, जो यहाँ के चित्रकारों ने भित्तियों या पट्टो पर स्वतन्त्र रूप सेक चित्र संयोजन किया हो, उनकी कल्पना एवं भावाभिव्यक्ति का परिचय तो उनकी मानव पशु आकृतियों के शिल्प एवं मोहरों से ही हो जाता है, फिर भी चित्रकारी का अनुमान मिट्टी के बर्तन भांडो पर बने असंख्य अंलकरण ईकाईओं से लगाया जा सकता है। मिट्टी के बर्तनों पर बने इन चित्रित अंलकरणें को भाण्डालेख भी कहा जाता था। इन अंलकरणों मे टेढ़ी–मेड़ी रेखाऐं लहरिया, कंद्या, सूर्य, घिर्रिया, तारे बाण–भुख, चौफुलिया, चौपड़, मत्स्यशल्य जाल, छोटे घरों की जाली, कीरमकाट चौकोर, तिकोने, ज्यामितीय आकार, मछली मौर, सींढ़दार पशु, जलचर, आदि अनेक रूप में अंकित है।

मानव आकृतियों का अंकन बहुत कम होते हुये भी बहुत रोचक है। एक मछुआरा अपने कंघो पर बंहगी लिए जा रहा है, तथा एक शिकारी मृग का शिकार करते हुये दर्शाया गया है। हड़प्पा से प्राप्त पात्रों मे लाल धरातल पर काले रंग से चित्रकारी को गई है। इन पात्रों के किनारों पर सितारों तथा बिन्दुओ द्वारा पूष्पभूमि का चित्ररण भरा पड़ा है। बकरे, मयूर तथा मछलियों को आंलकारिक रूप में चित्रित किया गया हैं। बर्तनों पर प्राप्त होने वाली चित्रकारी यहाँ की लोक सांस्कृतिक कला को सशक्त बनाती है। जिससे चित्रकार के विषय मंथन का बोद्य किया जा सकता है। वास्तव में सिंधु सभ्यता सरल ग्रामीण जीवन से आरम्भ होकर विश्व की श्रेष्ठ एवं महत्वपूर्ण नगर सभ्यता के रूप में विकसित हुई।

मोहन जोदड़ों हड़प्पा की खुदाई से प्राप्त अवशेषों से प्राप्त नर्तकी की कांस्य प्रतिमा जो नृत्ययुक्त मुद्रा में है तथा यथार्थ अंकन का एक सफल उदाहराण भी है यही से पुरोहित की प्रस्तर प्रतिभा भी प्राप्त हुई जों त्रिफुलिया अंलकरण से सुज्जित उत्तरीय ओढे माथे पर चन्दन का टीका लगाये युवावस्था के अनुरूप छोटी दाढ़ी रखे, भुजबन्द धारण किये है, शान्त मुद्रा मे अंकित है। यह प्राक आर्य सभ्यता में व्यक्ति चित्रण की परम्परा को प्रमाणित करने का उपलब्ध उदाहरण है जिसका क्षीण संकेत इस संस्कृति के भारत के दक्षिणी भाग में व्यवस्थित होने पर मिलते रहे वहाँ मानव प्रतिमाओं के निर्माण की श्रृखंला मुगल राज्य स्थापित होने तक किसी न किसी रूप में चलती रही इसके प्रमाण स्टेला क्रेमरिश द्वारा प्रकाशित ''पोर्टेट स्कल्पचर इन साउथ इण्डिया'' में प्रस्तुत किये गये है। कुषाण काल में मानव प्रतिमाओं की स्पष्ट धारा दिखाई देती है इनमें एक प्रतिमा मथुरा राज्य के प्रथम शासक 'विमतक्षय' की है जिसका काल 40 ई0 से 87 ई0 था। वह एक शाक्ति शाली सम्राट था जैसा कि उसकी उपाधि 'सर्व लोकेश्वर' से प्रकट होती है। वह शैव धर्म का अनुयायी था उसकी प्रतिमा मथुरा संग्रहालय में है। वह सिहांसन पर विराजमान है तथा मूर्ति का सिर खण्डित है पूरी बाहों का सूट, सलवार और भारी बूट पहने है। उसकी दोनो जंघाओं पर शाल पड़ा है प्रतिमा के नीचे 'बिमतक्षम' नाम लिखा है।

कुषाण वंश का शासक कनिष्क की विशाल प्रतिमा मथुरा संग्रहालय में संग्रहित है जिसमें वह बड़े शान के साथ खड़ा है। इस समय वह सिर विहीन है जिसमें पैरो तक का नीचा कोट सलवार तथा भारी बूट पहने दिखाया गया है। कोट के ऊपर लम्बा चौगा तथा कमर में अंलकरण युक्त पगडी है। दाहिने हाथ में विशाल कलात्मक गुर्ज लिए है जिसकी ऊपरी भाग की मूठ टूटी है बाएं हाथ में मूँठदार लम्बा खड़ग है। प्रतिमा के नीचे कुषाण कालीन ब्राहमी लिपि में महाराज राजधिराज देव पुत्रों में कनिष्ठ अंकित है। भारत में इण्डों–पर्सियन काल में मानव अंकित धातु पटल पर उत्कीर्ण सिक्कों पर बने व्यक्ति चित्रण के रूप में देखा जा सकता है। यह भी मानव अंकन को प्रमाणित करने का एक आधार है इसका श्रेय यूयान शासको को है। इसमें दिमित्रिय युक्रेतिद और मिनेंडर का नाम विशेष उल्लेखनीय है। मिनेंडर सबसे ख्याति प्राप्त था। यूनानी कला के योग से सर्वप्रथम अंकन भारत में सफल इसी युग में हुआ है।

अजन्ता की गुफाओं मे भी व्यक्ति चित्रण की परम्परा परिलक्षित होती है। अजन्ता की प्रथम गुफा में जिसमें चालुक्य वंशीय पुलेकिशियन द्वितीय व ससानी शासक खुसरो का मैत्री भाव का चित्रण मिलता है। श्री मुल्क राज आनन्द ने इसे प्रमाणिक व्यक्ति चित्र माना है। [3] इसी तरह सित्तनवसल की गुफा के तीसरे प्रकोष्ठ में पल्लव राजमहेन्द्र वर्मा का चित्र सपत्नीक चित्रिक है। [4]

तंजौर के वृहदीश्वर मन्दिर के प्रांगण मे राजा अपनी पत्नियों सहित चित्रित है।[5] भंवर लाल नाट्य ने 12वीं सदी के एक व्यक्ति चित्र का उदाहरण जो काष्ठफलक पर प्रस्तुत किया है। यह फलक इस समय जैसलमेर के प्रंथागार में चंद्रपत्रति संख्या 241 में रखा है।[6] कलकत्ता संग्रहालय में मुहम्मद तुगलक का एक व्यक्ति चित्र उपलब्ध है जिसे हेवेल तथा डा0 कुमार स्वामी ने प्रमाणिक माना है। इसकी शैली स्टैला क्रेमरिश के अनुसार दक्षिणी हो सकती है ।

निष्कर्ष

अतः कहा जा सकता है कि एक चित्रकार हर युग की संस्कृति का अवलोकन कर अपनी बनायी गयी प्रतिमा से इतिहास रचने में उसका महत्वपूर्ण स्थान रखता है। जिसके माध्यम से हम इस युग की परम्परा व संस्कृति से भली भाँति परिचित होने मे लाभन्वित होते है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *छान्दोग्य उपनिषदः 8/8/5*
2. *छान्दोग्य उपनिषदः 8/8/5*
3. *मुल्कराज आनन्द, पारेसियन एम्बेसी केव नं0–1 पृष्ठ–40*
4. *भगवती शरण उपाध्याय, गुप्तकालीन सांस्कृतिक इतिहास पृष्ठ–196*
5. *कृष्णदास राय, भारत की चित्रकला पृष्ठ–24*
6. *कृष्णदास राय, भारत की चित्रकला पृष्ठ–24*